षष्ठ अध्याय

श्राद्ध-निरूपण

धर्मसूत्रों और गृह्यसूत्रों में श्राद्ध के सम्बन्ध में समुचित व्यवस्था प्रतिपादित की गयी है। ऋग्वेद[1] में श्रद्धा नाम भाव को देवी माना गया है, तथा उसका आह्वान भी किया गया है। ऋग्वेद में श्रद्धा शब्द का प्रयोग कई स्थानों पर हुआ है।[2] तैत्तिरीय [3] संहिता में उल्लेख आया है कि बृहस्पति की इच्छा थी कि देवता लोग मुझ में श्रद्धा रखें मैं उन का पुरोहित बन जाऊँ। यजुर्वेद[4] के अनुसार प्रजापति को सत्य में श्रद्धा है और असत्य में अश्रद्धा है। किन्तु एक स्थान पर यह भी कहा गया है कि सत्य की प्राप्ति श्रद्धा से होती है।

देवल के अनुसार धार्मिक कार्यों के करने में विश्वास और निपुणता ही श्रद्धा कहलाती है।[5] अतः श्रद्धा और श्राद्ध में घनिष्ठ सम्बन्ध दिखाया गया है। श्रद्धा के बिना धर्म कार्यों को करने का कोई लाभ नहीं होता।

इसी श्रद्धा से युक्त होकर पितरों एवं प्रेतात्माओं के निमित्त जो पिण्डदान आदि कृत्य किए जाते हैं वे श्राद्ध कहलाते हैं।

श्राद्धकर्त्ता द्वारा पितरों के निमित्त कव्यवाहन अग्नि में अन्नादि की आहुति प्रदान करना श्राद्ध कहलाता है। इस विषय में आपस्तम्बधर्मसूत्र में उल्लेख किया गया है कि

---

1 श्रद्धयाग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः।
श्रद्धांभगस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसि।। ऋग्वेद 10.151.1, 10.151.5

2 ऋग्वेद 2.26.3, 7.32.14, 8.1.31, 9.113.2, 9.113.4

3 बृहस्पतिरकामयत् श्रन्मे देवादधीरन् गच्छेयं पुरोधामिति। तै0 सं0 7.4.1.1

4 यजुर्वेद 19.77

5 प्रत्ययो धर्मकार्येषु तथा श्रद्धेत्युदाहृता नास्ति ह्यश्रद्धानस्य धर्म कृत्ये प्रयोजनम्।।
देवलकृत रत्नाकर, पृ0 16

"श्राद्ध कर्म की विधि का ज्ञान मनुष्यों को निःश्रेयस् प्राप्ति के लिए मनु द्वारा बतलाया हुआ है।"[1]

महाकवि कालिदास ने रघुवंश[2] महाकाव्य में पितरों को तृप्त करने के लिए पुत्र द्वारा 'पिण्डोदकक्रिया' अर्थात् पितरों को श्रद्धापूर्वक पिण्ड तथा जल देकर सन्तुष्ट करने की बात कही है।

इस श्राद्धकार्य के अन्तर्गत जिन के निमित्त यह कर्म सम्पादित किया जाता है उसमें पितृगण देवता होते हैं तथा जिन ब्राह्मणों को श्राद्धीय अन्न खिलाया जाता है वे आहवनीय अग्नि के प्रतीक माने गये हैं।[3]

श्राद्ध का अर्थ एवं महत्त्व

श्राद्ध शब्द की निष्पत्ति श्रद्धा शब्द में अण् प्रत्यय करने से होती है। अतः पाणिनि के मतानुसार 'श्रद्धा प्रयोजनस्य इति श्राद्धम्।'[4] स्कन्द[5] पुराण में कहा गया है कि श्राद्ध इसे इसलिए कहते हैं, क्योंकि इसके मूल में श्रद्धा होती है। शब्द कल्पद्रुम[6] में श्रद्धा ही इसका प्रयोजन है।

---

1 अथैतन्मनुः श्राद्धशब्दं कर्म प्रोवाच। प्रजानिःश्रेयसायच। आ0 ध0 सू0 2.7.16.1

2 नूनं मतः परं वश्याः पिण्डविच्छेदनदर्शिनः।
न प्रकामभुजः श्राद्धे स्वधासंग्रहतत्पराः।।
मत्परं दुर्लभं मत्वा नूनमावर्जितं मया।
पयः पूर्वे स्वनिःश्वासैः क्वोष्णमुपभुज्यते।। रघुवंश0 1.66–67

3 तत्र पितरो देवता ब्रह्मणास्त्वाहवनीयार्थे। आ0 ध0 सू0 2.7.16.2

4 (i) 'श्राद्धे शरदः एवं प्रयोजनम्' पर व्याख्या पा0 अष्टा0 तद्धिते,
शैषिक प्रकरण सूत्र 45:12 एवं सिद्धान्त कौमुदी 5.1.10.9
(ii) श्रद्धान्वेनास्त्यस्य अण्। वाच0 को0, पृ0 515

5 स्कन्द पु0 6.218.3

6 श्रद्धा प्रयोजन चूड़ादिभ्य उपसंख्यानम्। श0 कल्प0, पृ0 515

कठोपनिषद्[1] में भी श्राद्ध का प्रयोग हुआ है। इसके पश्चात् सूत्र साहित्य में 'श्राद्ध' शब्द का प्रयोग पितृकर्म के लिए प्रचुर मात्रा में होने लगा। सूत्र साहित्य में पितरों के प्रति भोजन, वस्त्र, पेय आदि दान की विधि को श्राद्ध कहा जाने लगा।

ब्रह्म पुराण, मरीचि, बृहस्पति आदि सभी ने श्राद्ध की परिभाषा करते हुए 'श्रद्धया दीयते यत्र' अर्थात् जिसमें श्रद्धापूर्वक दिया जाए इन शब्दों का प्रयोग किया है।

कात्यायन[2] ने अपने गृह्यसूत्र के श्राद्ध–प्रकरण में कहा है कि श्रद्धा से युक्त होकर शाक आदि से भी श्राद्ध करना चाहिए। पाररकर[3] गृह्यसूत्र में भी आया है कि जिसमें श्रद्धापूर्वक दिया जाए उसे श्राद्ध कहते हैं।

श्राद्धकर्त्ता की भी यह दृढ़ श्रद्धा होती है कि जो उसके द्वारा पितरों के निमित्त ब्राह्मणों को खिलाया जाता है या अग्नि में जो आहुतियाँ डाली जाती हैं वे अवश्यमेव पितरों के पास पहुँच जाती हैं। अतः स्पष्ट है कि श्राद्ध का सम्बन्ध श्रद्धा से है।

आपस्तम्ब प्राचीन धर्मसूत्र है। इस धर्मसूत्र के द्वितीय प्रश्न के सप्तम तथा अष्टम पटल में श्राद्ध का वर्णन है।[4]

गोभिल[5] गृह्यसूत्र में कहा गया है कि जो श्राद्ध अमावस्या के दिन किया जाता है वह पिण्ड पितृ–यज्ञ कहलाता है परन्तु डॉ0 कैलेण्ड[6] का मत है कि पिण्ड–पितृ यज्ञ तो श्रौत अनुष्ठान है जबकि श्राद्ध गृह्य अनुष्ठान है अतः इसे श्राद्ध नहीं कहना चाहिए।

---

1 य इयं परमं गुह्यं श्रावेयद् ब्रह्मसंसदि।
प्रयतः श्राद्ध काले वा तदानन्त्याय कल्पते। कठो0 1.3.17

2 श्रद्धान्वितः श्राद्धं कुर्वीत शाकेनापिश्राद्धसूत्रम्। का0 गृ0 सू0 4.1

3 श्रद्धा दीयते यस्मात् तेन श्राद्धंनिगद्यते। पा0 गृ0 सू0 4.1

4 आ0 ध0 सू0 2.7.16.1–24, 2.8.17.1–23

5 अन्वष्टक्यस्थालीपाकेन पिण्डपितृयज्ञो व्याख्यातः।
अमावस्यां तच्छाद्धमितरदन्वाहार्यम्। गौ0 गृ0 सू0 4.4.1.2

6 Caland Altindshche Ahenecult, p. 16-17

बौधायनधर्मसूत्र में कहा गया है कि श्राद्ध कर्म दीर्घायु प्रदान करने वाला, स्वर्ग देने वाला, प्रशंसनीय तथा समृद्धि को प्रदान करने वाला कहा गया है।[1]

मानव गृह्यसूत्र के भष्यकार अष्टावक्र ने कहा है कि पितृ–कर्म जिस मुख्य शब्द के अन्तर्गत आता है उसे श्राद्ध कहते हैं।[2] पुलस्त्य[3] ने श्रद्धापूर्वक दान हेतुक कर्म श्राद्ध कहा है।

श्राद्ध की तिथि

आपस्तम्बधर्मसूत्र में श्राद्ध–भोजन व श्राद्ध सम्बन्धी कर्म सम्पादित करने का जो समय निर्धारण किया गया है उसका उल्लेख निम्न प्रकार से है –

श्राद्ध कर्म करने के लिए प्रत्येक मास का विधान किया गया है।[4] उसमें भी मास के दूसरे पक्ष में दोपहर के बाद का समय श्राद्ध कर्म के लिए श्रेयस्कर कहा गया है।[5] दूसरे पक्ष के अन्तिम दिन ज्यादा श्रेष्ठ माने गये हैं।[6] इसी प्रसङ्ग में इसी धर्मसूत्र में यह भी उल्लेख हुआ है कि मास के उत्तर पक्ष में किसी भी दिन को अर्पित किया गया श्राद्ध पितरों के लिए सन्तुष्टि प्रदान करता है तथा समय के नियमानुसार श्राद्ध करने वाले के लिए इसका विशेष फल मिलता है।[7]

---

1 बौ0 ध0 सू0 2.8.14.1

2 मा0 गृ0 सू0 2.9.9

3 पुलस्त्य स्मृ0 श्रा0 प्र0 4, पृ0 285

4 मासि मासि कार्यम्। आ0 ध0 सू0 2.7.16.3

5 अपरपक्षस्याऽपराह्ण श्रेयान्। आ0 ध0 सू0 2.7.16.4

6 तथाऽपरपक्षस्य जघन्यान्यहानि। आ0 ध0 सू0 2.7.16.5

7 सर्वेष्वेवाऽपरपक्षस्याऽहस्सु . . . फल विशेषः। आ0 ध0 सू0 2.7.16.6

ब्राह्मण तथा सूत्र ग्रन्थों में इस विषय का उल्लेख हुआ है कि पितरों का प्रत्येक मास मे अशन होता है।[1] अपर पक्ष में प्रतिपदा से लेकर चतुर्थी और उसके बाद का समय उत्तम बतलाते हुए अनेक धर्म शास्त्रकारों ने अपने–अपने धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में उल्लेख किया है।[2]

गौतमधर्मसूत्र में उल्लेख है कि अमावस्या को पितरों के निमित्त होम, ब्राह्मण–भोजन और पिण्ड का दान देना चाहिए अथवा कृष्ण–पक्ष की पञ्चमी आदि तिथियों में या कृष्ण–पक्ष की सभी तिथियों में अपनी श्रद्धानुसार श्राद्ध कर्म करना चाहिए। अथवा जब तिल, माष आदि द्रव्य, गया पुष्कर आदि देश और पवित्र षड़ङ्गविद् ब्राह्मण का संयोग हो तो उस समय श्राद्ध का समय समझना चाहिए।[3]

श्राद्धीय ब्राह्मण

श्राद्ध कर्म में श्राद्धीय–भोजन हेतु ब्राह्मणों को आमन्त्रित किया जाता है। श्राद्ध कर्म पवित्र होकर, प्रसन्न मन से उत्साहपूर्वक वेदज्ञ ब्राह्मणों को श्राद्धकर्म में भोजनार्थ आमन्त्रित करें। वेदज्ञ ब्राह्मणों से आशय है कि जिनका विवाह सम्बन्ध,

---

1 मासि–मासि। आश्व0 गृ0 सू0 2.5.10, मासि–मासि पितृभ्यो दद्यात्। शा0 गृ0 सू0 4.1, मासि–मासि वोऽशनम्, पा0 गृ0 सू0 एवं कात्या0 गृ0 सू0 परि0 क0 1, मासि मास्यसिते। वि0 पु0 3.14

2 अपराह्णेपितरः। शत0 ब्रा0 1.6.3.12, पराञ्च उवे पितरः, कौ0 ब्रा0 5.6, अपराह्णे भाजो वै पितरः तस्माद् . . . चरन्ति। गौ0 ब्रा0 1.2.4, यः (अर्धमासः) अपक्षीयते सः पितरः। शत0 ब्रा0 2.1.3.1, अपक्षय भाजो वै0 पितरः। कौ0 ब्रा0 5.6, आश्व0 गृ0 सू0 4.7.4, आ0 श्रौ0 सू0 2.16.4 मा0 गृ0 सू0 2.9.9, मनु स्मृ0 3/278, याज्ञ0 स्मृ0 1.217

3 गौ0 ध0 सू0 2.6.2,3,4,5

यजमान–पुरोहित–सम्बन्ध या गुरु–शिष्य सम्बन्ध न हो ऐसे वेदज्ञों को श्राद्ध का भोजन करवाना चाहिए।[1]

यदि ऐसे ब्राह्मणों का अभाव हों तो गुणवान् सहोदर भाई को ही श्राद्ध का भोजन कराया जा सकता है।[2] आपस्तम्ब तथा मनु दोनों ने इसका उल्लेख किया है कि सहोदर के साथ दूसरे सम्बन्धी और अन्तेवासी भी भोजन कराये जाने योग्य हैं। किन्तु सम्बन्धियों को भोजन कराने में कुछ धर्मज्ञों का वैमत्य भी है। इस वैमत्य का भी आपस्तम्बधर्मसूत्र में उल्लेख किया गया है कि सम्बन्धियों को श्राद्धीय भोजन यदि कराया जाता है तो वह भोजन पितरों को न मिलकर पिशाचों को मिलता है और वह अन्न न देवताओं के पास पहुँचता है न पितरों को ही प्राप्त हो पाता है। वह भोजन पुण्यफल से विहीन होकर इस लोक में इस प्रकार से भटकता है जिस प्रकार बछड़े के खो जाने पर गौ उस बछड़े को गोशाले के अन्दर ढूँढती रहती है।[3]

आजकल भी लोग अज्ञान वश या समस्या से बचने के लिए या फिर ब्राह्मणों के पास न जाने अथवा ब्राह्मणों की उपयुक्तता न होने से अपने सम्बन्धियों, रिश्तेदारों, भानजों या कन्याओं को बुलाकर ही कर्म सम्पन्न कर लेते हैं। बहुत जगह तो अब लोग इस कर्म से अपरिचित से लगते हैं या फिर एक परम्परा मात्र निभाने की कल्पना करते हैं। जबकि

---

1 (क) प्रयतः प्रसन्नमनास्सृष्टो भोजयेद् ब्राह्मणान् ब्रह्मविदो योनिगोत्रमन्त्रान्तेवास्यसम्बन्धान्। आ0 ध0 सू0 2.7.16.4

(ख) श्रोत्रियान्वाग्रूपवयः, शील संपन्नान्। गौ0 ध0 सू0 2.6.9, 22 पा0 सू0 1.3.38

(ग) चरणवतोऽनूचानान्यो निगोत्रमन्त्रासम्बन्धाऽछुचीन्मन्त्रवतस्त्र्यवरानयुजः।
बौ0 ध0 सू0 2.14.6 पूर्वार्द्ध

(घ) पूर्वेद्युरपरद्युर्वा विनीतात्मा निमन्त्रयेत्। मत्स्य पु0 16.17

2 गुणहान्यां तु परेषां समुदेतः सोदर्योऽपि भोजयितव्यः। आ0 ध0 सू0 2.8.17.5, आ0 ध0 सू0 2.7.17.6., मनु स्मृ0 3/147, 3/148

3 सम्भोजनी ताम पिशाचभिक्षा नैषापितॄन् गच्छति नोऽथ देवान्।
इहैव सा चरति क्षीणपुण्या शालान्तरे गौरिव नष्टवत्सा।। आ0 ध0 सू0 2.7.17.8

आपस्तम्बधर्मसूत्र में इस विषय में कहा गया है कि "सम्बन्धियों को दिया गया भोजन तथा दान इसी लोक में एक कुल से जाकर दूसरे कुल में नष्ट हो जाता है।"[1]

श्राद्धीय ब्राह्मण का निमन्त्रण समय

इस धर्मसूत्र में कहा गया है कि श्राद्ध–कर्म के लिए श्राद्धीय ब्राह्मणों को एक दिन पहले भोजन के लिए निमन्त्रण देना चाहिए। पुनः दूसरे दिन दुबारा श्राद्ध के विषय में निवेदन कर के निमन्त्रण देना चाहिए। जब श्राद्ध वाले दिन भोजन तैयार हो जाए तब तीसरा निमन्त्रण देना चाहिए।[2] गौतम ने कहा है कि वेदज्ञ सुशिक्षित शुद्ध वाणी वाले गुण व रूप सम्पन्न ब्राह्मण तथा जो शीलवान् भी हो को भोजन के लिए बुलाना चाहिए।[3]

कुछ आचार्यों का मत है कि पिता आदि के अनुरूप दान देना चाहिए अर्थात् पिता के निमित्त तरुणों को, पितामह के लिए वृद्धों को और प्रपितामह के लिए अत्यन्त वृद्धों को देना चाहिए।[4]

आश्वलायन गृह्य सूत्र में तो यह कहा गया है कि श्राद्ध के लिए श्राद्धीय ब्राह्मण को समय पर निमन्त्रित कर देना चाहिए परन्तु इस के व्याख्याकार ने सूत्र की व्याख्या में कहा है कि जो स्मृतियों में निमन्त्रण काल कहा गया है, उसी समय में श्राद्धीय ब्राह्मणों को आमन्त्रित करना चाहिए।[5]

पारस्कर गृह्यसूत्रकार तथा कात्यायन गृह्यसूत्रकार का वचन है कि जिस दिन श्राद्ध करना हो, उसी दिन ब्राह्मणों को आमन्त्रित करें अथवा श्राद्ध वाले दिन से पूर्व वाले

---

1 इहैव सम्भुञ्जतीति दक्षिणा कुलात्कुलं विनश्यतीति। आ0 ध0 सू0 2.7.17.9

2 'पूर्वेद्युनिवेदनम्', आ0 ध0 सू0 2.7.17.11, 'अपरेद्युद्वितीयम्' आ0 ध0 सू0 2.7.17.12, 'तृतीयमामन्त्रणम्' आ0 ध0 सू0 2.7.17.13, बौ0 ध0 सू0 2.8.14.6

3 श्रोत्रियान्वाग्रूपवयः शील संपन्नान्। गौ0 ध0 सू0 2.6.9

4 'एके पितृवत्', गौ0 ध0 सू0 2.6.11

5 काले ज्ञापित्वान् स्मृत्युक्त निमन्त्रणकाले निमन्त्रितमित्यर्थम्। आश्व गृ0 सू0 भाष्यकार 4.7.2

दिन में आमन्त्रित करना चाहिए।[1] बौधयनधर्मसूत्र में कहा गया है कि श्राद्ध के दिन से एक दिन पहले अथवा श्राद्ध के दिन ही प्रातःकाल निमन्त्रण देना चाहिए। जब ब्राह्मण घर पर पहुँच जाए तो उन्हें दर्भ से ढके हुए आसनों पर पूर्व या उत्तर की ओर मुख कराकर बैठाना चाहिए।[2] भारद्वाज गृह्य सूत्र में कहा गया है कि श्राद्ध से पहले दिन ब्राह्मणों को निमन्त्रण देना चाहिए।[3]

अतः एव उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि श्राद्धिय ब्राह्मण को पवित्र व विनम्र भाव से अच्छी तरह उसके गुण–शील, वेद–विद्या, स्वरूप स्वभाव, जाति, कुल का विचार करके श्राद्ध के लिए बुलाना चाहिए तथा श्राद्धीय ब्राह्मण को श्राद्ध वाले दिन से एक–दो दिन पूर्व ही आमन्त्रण करने जाना चाहिए जिससे वह श्राद्ध कर्म में सुनिश्चित समय पर पहुँच सके। श्राद्ध करने वाला व्यक्ति श्राद्धीय ब्राह्मण को श्रद्धापूर्वक ही आमन्त्रित करे।

श्राद्धीय ब्राह्मण की योग्यता

श्राद्ध देने वाला चाहे जो भी हो किन्तु इस श्राद्ध के अन्न–पान के लिए आमन्त्रण पाने वाले अधिकारी केवल ब्राह्मण ही माने गये हैं। सूत्र ग्रन्थों में श्राद्ध के विषय में संक्षेप में किन्तु स्मृतियों में कुछ अधिक विस्तार से वर्णन मिलता है।

---

1 यदहः संपद्येत तदह ब्राह्मणानामन्त्र्यपूर्वेद्युर्वा। पार० गृ० सू० परि० क० 1, कात्या० गृ० सू० परि० क०।

2 (क) पूर्वेद्युः प्रातरेव निमन्त्र्य सदर्भोपक्लृप्तेष्वासनेषु प्राङ्मुखानुपवेशयत्युदङ्मुखान्वा। बौ० ध० सू० 2.8.14.6

(ख) पूर्वेद्युरपरेद्युर्वा श्राद्धकर्मण्युपस्थिते।

(ग) निमन्त्रयेत् त्रयवारान्सम्यग्विप्रान्यथोदितान्।। मनु स्मृ० 3.187
निमन्त्रयेत् पूर्वेद्युब्राह्मणानात्मवा शुचिः।। याज्ञ० स्मृ० 1.225

3 यथोपदेशं पूर्वेद्युर्वा। भार० गृ० सू० 3.16

आपस्तम्बधर्मसूत्र[1] में श्राद्धीय ब्राह्मण की योग्यता के विषय में कहा गया है कि 'मधुवाता ऋतायते'[2] आदि तीन–तीन बार मधु शब्द से युक्त वेद की तीन ऋचाओं[3] का जो अध्ययन करता है, उनको श्राद्ध के भोजन के लिए आमन्त्रित करना चाहिए। किन्तु बौधायनधर्मसूत्र[4] में वर्णित उत्तम आचरण वाले, वेदों के विद्वान् पवित्र मन्त्र के ज्ञाता श्रोत्रिय, त्रिमधु आदि को जानने वाले, वेदाङ्ग के विद्वान् ब्राह्मणों को श्राद्ध के लिए बुलाने हेतु उल्लेख प्राप्त है। इसके साथ ही एक अन्य ग्रन्थ में उल्लेख है कि तीन बार सुपर्ण[5] शब्द (ब्रह्मेतु माम्, ब्रह्ममेधया ब्रह्ममेधवा) से युक्त वेद के अंश का ज्ञान रखने वाला तथा जिसने तीन बार नचिकेत अग्नि का चयन किया हो (कठोपनिषद् में तीन बल्लियों में इसका वर्णन है।) वह ब्राह्मण ही श्राद्ध योग्य होता है। आपस्तम्बधर्मसूत्र[6] में ब्राह्मण की योग्यता के लिए पुनः कहा गया है कि अश्वमेध, पुरुष मेध, सर्वमेध, पितृमेध इन चारों यज्ञों में प्रयुक्त मन्त्रों का ज्ञान रखने वाला पाँचों–अग्नियों[7] (सावित्र, नाचिकेत, चातुर्होत्र, वैश्वसृजा, रुणकेतुकाख्याः) को प्रज्वलित करने वाला, ज्येष्ठ साम को जानने वाला, प्रतिदिन अध्यवसाय (शिरोव्रत) करने वाला, वेद के छः अङ्ग तथा वेदों का अध्यापन करने में समर्थ ब्राह्मण का पुत्र एवं तीन विद्याओं के ज्ञाता का पुत्र तथा श्रोत्रिय, ऐसे ब्राह्मण को श्राद्ध

---

1 त्रिमधुस्त्रिसुपर्णास्त्रिचिकेतश्चतुर्मेध – इत्यादि पूर्वार्द्ध – आ0 ध0 सू0 2.7.17.22 बौ0 ध0 सू0 2.8.14.2, गौ0 ध0 सू0 2.6.29

2 मधुवाता ऋतायते, मधुनक्तमुतोषसि, मधुमान्नोवनस्पतिः, तै0 सं0 4.2.9.

3 चतुष्कपर्दा युवतिः, एकस्सुपर्णसमुद्रम् सुपर्णविप्राः इति तिस्रः ऋचः। ऋ0 सं010.114.3,4,5

4 बौ0 ध0 सू0 2.8.14.6

5 ब्रह्ममेतु माम, ब्रह्ममेधया, ब्रह्ममेधवा। इति अनुवाक त्रयं त्रिसुपर्णः। तै0 आ0 महानारायणोपनिषद् 38, 39, 40

6 आ0 ध0 सू0 2.7.17.22 का उत्तरार्द्ध

7 पञ्च चयन विशेषाः तैत्तिरीय ब्राह्मणे ३ याष्टके दशमादिषुत्रिषु प्रपाठकेषु समन्त्रका आम्नाताः पञ्चाग्नयः। काठके 1.2.3

भोजन के लिए योग्य बतलाया गया है। ऐसे ब्राह्मण श्राद्धीय भोजन में पंक्ति को पवित्र करते हैं। इन्हें ही श्राद्ध में भोजन के लिए बुलाना चाहिए।

गौतमधर्मसूत्र तथा मनुस्मृति में भी यही कहा गया है कि जो त्रिणाचिकेत (अध्वर्यु जो वेद के एक भाग को पढ़े और उस भाग के पढ़ने में जो व्रत करना अनिवार्य है उस व्रत को जो करे उसे त्रिणाचिकेत कहते हैं)। अग्निहोत्र करने वाला, त्रिसुपर्ण, वेद के छः अङ्गों का जानने वाला ब्राह्म विवाह से उत्पन्न एवं ज्येष्ठ सामों का गायन जाननने वाला आदि सभी श्राद्ध के योग्य ब्राह्मण होते हैं, उनको श्राद्ध में भोजन करवाना चाहिए, वे ही पंक्ति को पवित्र करने वाले होते हैं।[1] ऐसा एक भी हज़ारों की पंक्ति को पवित्र कर देता है। इससे पितरों को अक्षय्य तृप्ति मिलती है। ऐसा ही उल्लेख पाररकर गृह्य सूत्र में भी मिलता है।[2] किन्तु आश्वलायन के मत से ऐसे वेद ज्ञान सम्पन्न ब्राह्मणों को भोजनार्थ श्राद्ध में बुलाना चाहिए, किन्तु अनेक ब्राह्मण न मिले तो वेदज्ञ एक ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिए।[3]

आपस्तम्बधर्मसूत्र में कहा गया है कि जितना भी हो सके सभी उत्तम गुणों से युक्त ब्राह्मण को ही भोजन कराना चाहिए।[4] शांखायन गृह्य सूत्रानुसार वेदों के ज्ञाता ब्राह्मण को पितृगण के समान समझ कर श्राद्धीय भोजन के लिए आमन्त्रित करना चाहिए।[5]

1(क) पङ्क्तिपावनः षडङ्गविज्ज्येष्ठ सामिकस्त्रिणाचिकेतस्त्रिमधुस्त्रिसुपर्णः पञ्चाग्निःस्नातको मन्त्रब्राह्मणविद्धर्मज्ञो ब्रह्मदेयानुसंतान इति।। गौ0 ध0 सू0 2.6.29, 'हविषु चैवम्'। गौ0 ध0 सू0 2.6.30

(ख) त्रिणाचिकेतः पञ्चाग्नि स्त्रिसुपर्णाः षडङ्गवित्।
ब्रह्मदेयात्मसंतानो ज्येष्ठसामग एव च।। मनु0 स्मृ0 3/185

2 मन्त्राध्यायिनः पूताः शाखाध्यायी षड्ङग विज्जेष्ठ सामगो गायत्री सारमात्रोऽपि पञ्चाग्निः स्नातक स्त्रिणाचिकेत स्त्रिमधुस्त्रिसुपर्णी द्रोण पाठक . . . पंक्ति पुनातीति वचनात्।। पा0 गृ0 सू0 श्रा0 सू0 परि0 क0 8, मनु स्मृ0 3.145–47

3 श्रुतशीलः वृत्तसम्पन्नान् ब्राह्मणान्, एकेन वा, आश्व0 गृ0 सू0 4.2

4 समुदेतांश्च भोजयेत, आ0 ध0 सू0 2.8.18.11

5 वेदविद्यो ब्राह्मणम्, शा0 गृ0 सू0 4.2

हिरण्यकेशि[1] गृह्य सूत्र में कहा गया है कि न हीनाङ्ग हों और न अधिकाङ्ग हो, जो योनि अथवा गोत्र से सम्बन्ध न रखते हो तथा जिनको धन के विषय में किसी प्रकार का लालच न हो ऐसे ब्राह्मणों को श्राद्ध में भोजन करवाना चाहिए।

श्राद्धीय–ब्राह्मणों के सन्दर्भ में इस आपस्तम्ब[2]–धर्म–सूत्र में एक नवीन दृष्टिकोण मिलता है जिसमें कहा गया है कि यदि तुल्य गुण वाले श्रेष्ठ ब्राह्मणों की संख्या अधिक हो तो उनमें वृद्धों (विद्वानों) को ही बुलाना चाहिए, वृद्धों में भी जो दरिद्र हों तथा श्रेष्ठ धनोपार्जन करने के इच्छुक हों उन्हें ही वरीयता मिलनी चाहिए किन्तु गौतम इसके विपरीत गुणशाली युवा व्यक्तियों के भी पक्षधर हैं।[3]

आपस्तम्बधर्मसूत्रकार[4] ने योग्य ब्राह्मणों के श्राद्धीय भोजन को ग्रहण करने के सम्बन्ध में कहा है कि सभी उत्तम गुणों से युक्त ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए तथा श्राद्धीय भोजन के अवशिष्ट अंश को ऐसे ब्राह्मणों को न दें जो गुण में उन ब्राह्मणों से हीन हों। अन्यथा ऐसा करने पर श्राद्धीय पुण्यफल नष्ट हो जाएगा और पितरों को अक्षय्य तृप्ति न होगी।

अतः श्राद्ध का भोजन उत्तम ब्राह्मणों को ही देना चाहिए तथा जो श्राद्धयोग्य ब्राह्मण श्राद्ध में भोजन करते हैं उसी से पितर तृप्त होते हैं।

---

1 ब्राह्मणान् शुचीन् मन्त्रवतः समंङ्गानयुज् आमन्त्रयेत्।
योनिगोत्रासम्बन्धानार्थपेक्षो भोजयेत्।। हिरण्य0 गृ0 सू0 2.12.1

2 तुल्यगुणेषु वयोवृद्धः, आ0 ध0 सू0 2.7.17.10

3 गौ0 ध0 सू0 2.6.9.10

4 समुदेतांश्च भोजयेन्न चाऽतद्गुणायोच्छिष्टं दद्युः।। आ0 ध0 सू0 2.20.2, मनु स्मृ0 11.30

श्राद्धीय ब्राह्मणों की संख्या

आपस्तम्बधर्मसूत्र तथा अन्य सूत्र ग्रन्थों में ब्राह्मणों की संख्या के विषय में उल्लेख है कि समृद्धि [1] चाहने वाला श्राद्धकर्त्ता उत्तरायण में तिष्य नक्षत्र होने पर मास के प्रथम पक्ष में कम से कम एक दिन और एक रात्रि उपवास करके स्थालीपाक पकावे और महाराज कुबेर के लिए अर्पित करे। उस अन्न में घृत मिलाकर एक ब्राह्मण को भोजन करावे और पुष्टि अर्थ वाले मन्त्र का पाठ कराकर समृद्धि की शुभाशंसा करावे। गौतमधर्मसूत्रकार[2] ने तीन से अधिक ब्राह्मणों को भोजन कराने का विधान बताया है। गुणवान् यदि हो तो एक को भी भोजन कराया जा सकता है।[3] मनु तथा वसिष्ठ भी यही मानते हैं।[4]

बौधायनधर्मसूत्रकार[5] ने ब्राह्मणों की संख्या के विषय में कहा है कि देव कार्य में दो ब्राह्मणों को, पितृ कर्म में तीन ब्राह्मणों को भोजन करावें। अधिक समृद्ध होने पर भी इन से अधिक संख्या में ब्राह्मणों को भोजन न करावें। अधिक संख्या में ब्राह्मणों को भोजन कराने पर – सत्कार, देश व समय के मूल्य का, पवित्रता का तथा योग्य ब्राह्मण का और सम्पत्ति

---

1 (क) उदगयन आपूर्यमाणपक्षस्यैकरात्रमवरार्ध्यमुपीष्यतेष्येण . . . पुष्टयर्थेन सिद्धि वाचयीत। आ0 ध0 सू0 2.8.20.3

(ख) कुबेराय वैश्रवणाय। महाराजाय नमः। तै0 आ0 1.31

2 भोजयेदूर्ध्वं त्रिभ्यः। गौ0 ध0 सू0 2.6.21

3 गुणवन्तम्, गौ0 ध0 सू0 2.6.22

4 (क) अपि वा भोजयेदेकं ब्राह्मणं वेदपारगम्, गौ0 ध0 सू0 2.6.22 की व्याख्या में वसिष्ठ का मत, पृ0 164

(ख) एकैकमपि विद्वासं . . . . इत्यादि। मनु स्मृ0 3/129

5 द्वौ देवे पितृ कार्ये त्रीनेकैकमुभयत्र वा भोजयेतसमृद्धोऽपि न प्रसज्जेत विस्तरे।

बौ0 ध0 सू0 2.8.10, मनु स्मृ0 3/125, याज्ञ स्मृ0 1/227, मत्स्य पु0 17.13–14

का विनाश होता है।[1] अतः आपस्तम्ब के विपरीत बौधायन ने अधिक ब्राह्मणों को श्राद्धीय भोजन का निषेध किया है।

आपस्तम्बधर्मसूत्र[2] में दूसरे श्राद्ध के लिए कहा गया है कि जब तक दूसरा तिष्य नक्षत्र नहीं आता तब तक प्रथम श्राद्ध के कर्म को प्रतिदिन करें व एक–एक ब्राह्मण को भोजन दें। दूसरे तिष्य नक्षत्र के आने पर दूसरे मास में दो ब्राह्मणों को भोजन करावे। तीसरे तिष्य में तीन ब्राह्मणों को भोजन करावे, चौथे में चार, पञ्चम में पाँच इस प्रकार एक वर्ष तक यह कर्म किया जाता है और प्रत्येक मास में एक–एक ब्राह्मण की संख्या बढ़ाई जाती है। इस प्रकार यह संख्या एक वर्ष में अठहत्तर (78) ब्राह्मणों को आमन्त्रित करने की हो जाती है। शांखायन[3] गृह्यसूत्र में उल्लेख है कि श्राद्ध में विषम संख्या में ब्राह्मणों को बुलाना चाहिए। इसमें से कम से कम तीन को पितरोंके प्रतिनिधिस्वरूप आमन्त्रित करना चाहिए। परन्तु आपस्तम्ब गृह्यसूत्र तथा भारद्वाज गृह्यसूत्र में केवल विषम तथा कम से कम तीन ब्राह्मणों को श्राद्ध में भोजन कराने का निर्देश किया गया है।[4] गौतमधर्मसूत्रकार[5] के अनुसार अयुज (विषम) संख्या में ब्राह्मणों को बुलाये। कम से कम नौ या अधिक संख्या में जितनों को खिला सकने का सामर्थ्य हो खिलाना चाहिए। परन्तु वे सभी वेदज्ञ, मृदुभाषी, अच्छी आकृति वाले प्रौढ़ अवस्था वाले एवं शील सम्पन्न होने चाहिए।

---

1 सत्क्रियां देशकालौ च शौचं ब्राह्मणसम्पदम्। पञ्चैतान्विस्तरो हन्ति तस्मात्तं परिवर्जयेत्।। बौ0 ध0 सू0 2.8.11

2 एवमहरहरापरस्मात्तिष्यात्। द्वौ द्वितीये, त्रीरंतृतीये, एवं संवत्सरमभ्युच्चयेन। आ0 ध0 सू0 2.20. 4–7.

3 ब्राह्मणान् वेदविदो अयुग्मांस्त्रयवारार्धान् पितृवदुपवेश्य।। शांखायन, गृ0 सू0 4.2

4 अयुग्मास्त्रयवरानिति। आ0 गृ0 सू0 8.21.2

अयुग्मान्ब्राह्मणान् भोजयेत्। भा0 गृ0 सू0 3.16

5 नवावरान्भोजयेदयुजः। यथोत्साहं वा। श्रोत्रियान् वाग्रूपवयशील सम्पन्नान्।

गौ0 ध0 सू0 2.6.7–9

आपस्तम्बधर्मसूत्र[1] में कहा है कि जो एक वर्ष पर्यन्त विधि से श्राद्ध करता है वह अत्यन्त समृद्धि पाता है।

आश्वलायन[2]गृह्यसूत्र में भी कहा है कि एक–एक पितर के लिए दो–दो या तीन–तीन ब्राह्मणों को निमन्त्रित करना चाहिए क्योंकि ब्राह्मण वृद्धि का अधिक फल मिलता है।

अतः उपर्युक्त वर्णन करने के आधार पर यह कहा जा सकता है कि श्राद्ध में आमन्त्रित ब्राह्मणों की संख्या न्यून से न्यूनतम अर्थात् एक तथा अधिकतम संख्या सामर्थ्य या श्रद्धानुसार हो सकती है।

सभी सूत्र ग्रन्थों में, स्मृतियों में तथा पुराणों में श्राद्धीय ब्राह्मणों को आमन्त्रित करने की संख्या सीमित ही रखने को कहा गया है। कुछ धर्मज्ञों का मत है कि श्राद्ध का प्रत्येक कर्म तीन बार करना चाहिए।[3]

अतः यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि श्राद्ध में ब्राह्मणों की संख्या के विस्तार का परित्याग करना चाहिए क्योंकि ब्राह्मणों की योग्यता, देश व समय की औचित्यता एवं पवित्रता का अभाव देखने में आता है।

श्राद्धकालीन होम

श्राद्ध के समय पितरों को अग्नि के माध्यम से जो कव्य प्रदान किया जाता है, उसे श्राद्धकालीन होम कहते हैं। पितृकर्म में होम का विशेष महत्त्व है। इस होम के देवता, मन्त्र, पदार्थ, आहुतियाँ और अग्नि ये पाँच प्रमुख अङ्ग होते हैं। इस पितृकर्म में कितने तथा कौन–कौन से देवताओं का आह्वान किया जाता है? कितनी आहुतियाँ दी जानी चाहिए?

---

1 महान्तं पोषं पुष्यति। आ0 ध0 सू0 2.8.20.8

2 आश्व0 गृ0 सू0 4.1.2

3 त्रिःप्रायमेके श्राद्धमुपदिशन्ति। आ0 ध0 सू0 2.7.17.14

किस पदार्थ की आहुतियाँ डाली जाती हैं? अग्नि के अभाव में क्या–क्या करना चाहिए ? इत्यादि विषय सर्वप्रथम विचारणीय है।

आपस्तम्बधर्मसूत्र[1] में कहा गया है कि यह होम ब्राह्मणों को भोजन कराने के ठीक पहले किया जाता है।

ब्राह्मण को चाहिए कि वह "कामबुद्ध्रियतां काममग्नौ च क्रियताम्" इस मन्त्र को पढ़ कर कहे कि आप अपनी इच्छा से अन्न निकाल कर उसका हवन करें। हवन के लिए पक्वान्न पात्र से अलग निकाले व हवन सम्पन्न किया जाता है।[2]

'कुत्ता और पतित अथवा अपपात्र यदि श्राद्ध कर्म देखता है तो उस श्राद्ध कर्म को निन्दित माना जाता है। उसका हवन नहीं करना चाहिए। वह पितरों को प्राप्त नहीं होता।'[3]

इसी विषय में बौधायनधर्मसूत्र[4] में कहा गया है कि लाल या कषाय वस्त्र पहन कर मनुष्य जो प्रार्थनाएं या होम करता है अथवा जो दान लेता है वह देवों तक नहीं पहुँचता न ही उसके द्वारा दी गई हवि देवों के पास पहुँचती है।

तैत्तिरीय[5] ब्राह्मण के अनुसार पितृहोम में अग्नि, सोम एवं यम देवता हैं। इनके लिए तीन आहुतियां दी जाती हैं तथा अन्त में स्वधा शब्द का प्रयोग होता है। इस प्रकार आश्वलायन श्रौतसूत्र[6], आश्वलायन गृह्य सूत्र[7] तथा काठकगृह्यसूत्र[8] में दो, शांखायनश्रौत

---

1 उद्ध्रियतामग्नौ च क्रियतामित्यामन्त्रयते । आ0 ध0 सू0 2.7.17.18

2 काम मुद्धियतां काममग्नौ च क्रियतामित्यतिसृष्ट उद्धरेज्जुहुयाच्च। आ0 ध0 सू0 2.7.17.19, बौ0 ध0 सू0 2.8.14.7, 8

3 श्वभिरपपात्रैश्च श्राद्धस्य दर्शनं परिचक्षते। आ0 ध0 सू0 2.7.17.20

4 काषायवास यान्कुरूते जपहोम प्रतिग्रहान्।
न तद्देवगमं भवति हव्यकव्येषु यद्धविः। बौ0 ध0 सू0 2.8.15.5

5 तै0 ब्रा0 1.3.10.2–3

6 आश्व0 श्रौ0 सू0 2.6.12

7 आश्व0 गृह्य सू0 4.7.20

8 काठक गृह्य सू0 63.89

सूत्र[1], बौधायन गृह्यसूत्र[2] एवं मनु स्मृति[3] में तीन तथा आपस्तम्बगृह्यसूत्र[4] में त्रयोदश आहुतियों का उल्लेख हुआ है। जिनमें सात भोजन के साथ तथा छः घृत के साथ दी जाती हैं इसी भाँति अधिकांशतः सूत्रग्रन्थों में अग्निकरण की व्यवस्था है।

आपस्तम्बधर्मसूत्र में कहा गया है कि श्राद्ध का कोई कर्म रात्रि को न करना चाहिए।[5] यह भी कहा गया है कि जब तक श्राद्ध कर्म आरम्भ करके समाप्त न हो जाए भोजन नहीं करना चाहिए। यह भी कहा गया है कि रात्रि को चन्द्रग्रहण हो तो श्राद्ध कर्म सम्पादन करना ठीक नहीं होता।[6]

हवन विषय में जो आहुतियां पितरों को दी जाती हैं उसमें आश्वलायन[7] गृह्य सूत्र के अनुसार भी दो तथा काठक[8] गृह्यसूत्र के अनुसार दो, बौधायन[9] गृह्यसूत्र एवं मनु स्मृति[10] में तीन तथा आपस्तम्बगृह्यसूत्र में त्रयोदश आहुतियों का उल्लेख मिलता है। इनमें सात भोजन के साथ तथा छः घृत के साथ दी जाती हैं। इसी प्रकार अधिकांशसूत्र ग्रन्थों में अग्निकरण की व्यवस्था है।

---

1 शा0 श्रौ0 सू0 4.3

2 बौ0 गृ0 सू0 2.14.7

3 मनु स्मृ0 3.211

4 आ0 गृ0 सू0 8.22.4–5

5 'न च नक्तं श्राद्धं कुर्वीत।' आ0 ध0 सू0 2.7.17.23

6 आरब्धे चाऽभोजनमासमापनात् (अन्यत्र राहु दर्शनात्) आ0 ध0 सू0 2.7.17.24

7 आश्व0 गृ0 सू0 4.7.20

8 काठक गृ0 सू0 1.2.3.

9 बौ0 गृ0 सू0 2.14.7

10 आ0 गृ0 सू0 8.22.4.5, मनु0 स्मृ0 3/211

श्राद्ध के निमित्त भोज्य पदार्थ

पितरों के निमित्त श्राद्धकर्त्ता द्वारा प्रदान किए जाने वाले भोज्य पदार्थों में तिल, माष, व्रीही, जौ, मूल, फल और जल का विधान किया गया है।[1] इसके अतिरिक्त घी, तैल, शाक, मांस, सरसों आदि को भी श्राद्ध के लिए अर्पित करने का उल्लेख किया गया है। चिकने पदार्थों से युक्त अन्न प्रदान करने से पितृगणों को अधिक तथा दीर्घकाल तक सन्तुष्टि मिलती है।[2]

धर्मसूत्रकार ने उल्लेख किया है कि पालतू तथा जंगली पशुओं का माँस पितरों के लिए अर्पित करने से उन्हें सन्तुष्टि मिलती है।[3] माँस के विषय में यह धारणा है कि गौ का माँस अर्पित करने से एक वर्ष तक सन्तुष्टि होती है, भैंसे के माँस को अर्पण करने से उस से (गाय के माँस से) भी ज़्यादा समय तक के लिए पितरों को सन्तुष्टि मिलती है।[4] खड्ग अर्थात् गैंडे के चमड़े के आसन पर ब्राह्मणों को बैठाकर उन्हें गैंडे का माँस अर्पित करने से पितरों को अनन्त काल तक सन्तुष्टि मिलती है।[5] बौधायनधर्मसूत्र में हरदत्त की व्याख्या में खड्ग के माँस को श्राद्ध के लिए पवित्र कहा है।[6]

इसी प्रकार शतबलि (बहुत शल्यवाली लाल रंग की) नामक मछली व वार्घ्राणस नामक पक्षी के मांस को प्रदान करने से भी पितरों को अनन्तकाल तक तृप्ति मिलती है।[7] याज्ञवल्क्य ने भी वार्ध्रीणस (लम्बे कान वाला बकरा)का माँस श्राद्ध में अर्पण करने से पितरों

---

1 तत्र द्रव्याणि तिलमाषा व्रीहियवा आपो मूल फलानि च। आ0 ध0 सू0 2.7.16.22, मनु स्मृ0 3/268–270

2 स्नेहवति त्वेवाऽन्ने तीव्रतरा पितृणां प्रीतिर्द्राधीयांसं च कालम्। आ0 ध0 सू0 2.7.16.23

3 एतेन ग्राम्यारण्यानां पशूनां माँसं मेध्यं व्याख्यातम्। आ0 ध0 सू0 2.7.16.27

4 संवत्सरं गव्येन प्रीतिः। आ0 ध0 सू0 2.7.16.25, भूयांसमतोमाहिषेण ।। आ0 ध0 सू0 2.7.16.26, मनु स्मृ0 3/269–271

5 खड्गोपस्तरणे खड्गमांसेनाऽऽनन्त्यं कालम्। आ0 ध0 सू0 2.7.17.1

6 बौ0 ध0 सू0 1.5.12.5 सूत्र पर की व्याख्या – 'खड्गश्चश्राद्धे पवित्रम, बौ0 ध0 सू0, पृ0 95 पर

7 तथा शतबलेर्मत्स्यस्य मांसेन वार्घ्राणस्य च। आ0 ध0 सू0 2.7.17.2–3

के लिए तृप्तिदायक बतलाया है।[1] निगम तथा मेधातिथि के मतों का भी निर्णयसिन्धुकार ने वाध्रीणस के विषय में यही (पितृ तृप्तिदायक) व्याख्यान किया है।[2]

नित्य श्राद्ध के अन्तर्गत अन्तिम श्राद्ध में लाल रंग के बकरे की बलि का विधान किया गया है।[3] आपस्तम्बधर्मसूत्र की 'उज्ज्वलाख्या' व्याख्या में श्री मद्धरदत्तमिश्र ने तैत्तिरीय[4] संहिता का सन्दर्भ उद्धृत किया है। जिसके अन्तर्गत श्याम भी मेरे लिए लोहित भी मेरे लिए का उल्लेख हुआ है। अतः पितरों को लाल वस्तुओं को सम्पादन करने का विधान सन्तुष्टिप्रद बतलाया गया है।

शांखयन[5] गृह्यसूत्र के अनुसार जौ, तिल, दधि, बदर तथा अक्षतों से मिश्रित पिण्ड पितरों को अर्पण करने चाहिए। याज्ञवल्क्य स्मृति[6] में कहा गया है कि अन्न, फल, चावल, सूप, पायस और घृत तथा इनके अतिरिक्त बदरीफल तिल व यव श्राद्ध में पितरों की तृप्ति हेतु दिए जाते हैं।[7]

गौतमधर्मसूत्रकार ने श्राद्ध के भोज्य पदार्थों में तिल, माष आदि द्रव्य तथा अपनी शक्ति के अनुसार उत्तम प्रकार के भक्ष्य एवं मरिच, जीर, लवण आदि द्वारा छौंक बघार कर संस्कार विधि से श्राद्धीय अन्न बनाने का विधान किया है।[8]

---

1 याज्ञ0 स्मृ0, 1/260

2 निर्णय सिन्धु, पृ0 820

3 तेषामुत्तमं लोहेनाजेन कार्यम्। आ0 ध0 सू0 2.8.18.14, या0 स्मृ0 1/260

4 श्यामं च मे लोहं च मे इत्यादि चमकेषु। तै0 स0 4.7.5, आ0 ध0 सू0 2.8.18.14 की संस्कृत व्याख्या, पृ0 328

5 यवेस्तिलार्थाः। द्रुधिबदराक्षत मिश्रा पिण्डा। शां0 गृ0 सू0 4.8.9

6 'अन्नमोदन सूप पायस घृतादिकं भोजनेषु दत्त्वा' अन्नमिष्टं हविष्य च दधादक्रोधनोऽत्वरः।। आतृप्तेरस्तु पवित्राणि जप्त्वा पूर्व जपं तथा।। या0 स्मृ0 1/240

7 यजते दधि कर्कन्धु मिश्रान्पिण्डान्यैव क्रियाः।। या0 स्मृ0 1.250

8 गौ0 ध0 सू0 2.6.5,6

अन्न, शाल्योदन तथा पायसादि को श्राद्ध में भोजनार्थ पितरों के निमित्त अर्पित करने के लिए मानवगृह्यसूत्रकार ने भी बतलाया है।[1]

श्राद्ध में देय पदार्थों के सम्बन्ध में विष्णु पुराण में उल्लेख है कि देवधान्य, नीवार, दो प्रकार के श्यामक, मुख्य–मुख्य वनौषधियाँ, कङगुनी (एक प्रकार का अन्न) मूंग, गेहूँ, धान, तिल, मटर, कचनार और सरसों पितरों के लिए उपयुक्त द्रव्य हैं।[2] साधारण श्राद्ध में पय, मूल, फल, शाक होते हैं और यदि मनुष्य दूसरों के अधीन तथा गरीब हों तो मन के द्वारा शुद्ध भाव से तिलोदक देकर ही श्राद्ध सम्पूर्ण कर सकता है।[3]

अतः श्राद्ध के लिए भिन्न–भिन्न प्रकार के भोज्य–पदार्थ कहे गये हैं। उन सभी पदार्थों को श्राद्ध में भोजनार्थ प्रदान करने से पितरों को तृप्ति प्राप्त होती है। अतः सभी को अपने पूर्वजों की क्षुधा–पिपासा शान्त करने के लिए तथा पितृ–ऋण से मुक्ति प्राप्ति के लिए उत्तमोत्तम वस्तुओं को श्राद्ध में ब्राह्मणों को भोज्य पदार्थ के रूप में प्रदान करनी चाहिए।

श्राद्ध के लिए अभोज्य पदार्थ

श्राद्ध के लिए नवनीत, हाथों से मथा गया दधि, पीसे गये तिलों का पिण्ड, मधु और मांस को देने के लिए वर्जित किया गया है।[4] काले रंग के उड़द आदि अन्न, शूद्र द्वारा दिया गया पका हुआ या कच्चा अन्न अथवा दूसरे किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा दिया गया अन्न, जो

---

1 'अन्नशाल्योदन पायसादि'।। मा0 गृ0 सू0 2.9.8

2 प्रशान्तिकास्सनी . . . सर्षपाश्चात्र शोभनाः। वि0 पु0 3.16.5–6,निर्णय सि0 पृ0 816 श्राद्धे हवि विचारः।

3 पराधीन प्रवासी च निर्धनो वापि मानवः।
मनसा भाव शुद्धेन श्राद्धे दद्यास्तिलोदकमिति। नि0 सि0 पृ0 612

4 विलयनं मथितं पिण्याकं मधु मांसं च वर्जयेत्। आ0 ध0 सू0 2.8.18.1

खाने योग्य नहीं माना जाता निषिद्ध है। यज्ञ के लिए निषिद्ध माना गया कोदो भी नहीं देना चाहिए।[1]

उत्तम स्मृति, यश, बुद्धिमत्ता स्वर्गीय–सुख और समृद्धि की इच्छा रखने वाले व्यक्ति के लिए बारह वस्तुओं और कर्मों को वर्जित कहा गया है।[2]

नित्य श्राद्ध की विधि

आपस्तम्बधर्मसूत्र[3] में नित्य श्राद्ध करने का भी विधान किया गया है। श्राद्धकर्त्ता नित्य श्राद्ध कर्म अपने पितरों की सन्तुष्टि के लिए सम्पादित करे। नित्य श्राद्ध में नौ द्रव्य ग्रहण करने का उल्लेख किया गया है। किन्तु वे कौन–कौन से हैं? इसका स्पष्ट नामतः उल्लेख नहीं मिलता।

इस श्राद्ध को सम्पादित करने के लिए गाँव से बाहर अन्न पकाना चाहिए तथा जिन नौ द्रव्य का निर्देश किया गया हैं, उन्हीं से श्राद्धीय भोजन तैयार करने का विधान किया गया है। जिन पात्रों में यह अन्न तैयार किया जाता है तथा जिन काँस्यादि पात्रों में खाया भी जाता है वे सभी नवीन पात्र होने चाहिए। ऐसा उल्लेख श्री मद्धरदत्त मिश्र ने अपनी व्याख्या में किया है।[4] तत्पश्चात् उन पात्रों को ब्राह्मण के लिए देने का विधान किया गया है।[5] ब्राह्मण सभी उत्तम गुणों से युक्त होना चाहिए।[6]

---

1 कृष्णधान्यं शूद्रान्नं ये चान्येऽनाश्यसम्मताः। आ0 ध0 सू0 2.8.18.2,3

2 स्मृतिमिच्छन् यशो मेधां स्वर्गं पुष्टिं द्वादशैतानि वर्जयेत्। आ0 ध0 सू0 2.8.18.4

3 आ0 ध0 सू0 2.8.18.7,8

4 आ0 ध0 सू0 2.8.18.9 की सूत्र व्याख्या, पृ0 327

5 आ0 ध0 सू0 2.8.18.10

6 आ0 ध0 सू0 2.8.18.11

श्राद्धीय पात्रों का शेष यदि उन पात्रों में बच जाता है तो ऐसे ब्राह्मणों को खिलाने का विधान किया गया है जो गुणों में योग्य ब्राह्मणों से किसी भी प्रकार से कम न हो।[1]

इसके लिए गाँव से बाहर छिपा कर वेदी बनाकर उसके उत्तर के आधे भाग में ब्राह्मणों को भोजन कराया जाता है।[2] इस सम्बन्ध में धर्मज्ञों का कथन है कि वह श्राद्धकर्त्ता इस प्रकार उस वेदी पर भोजन कराते समय ब्राह्मणों और पितरों दोनों के दर्शन करता है।[3] तत्पश्चात् एक मास तक श्राद्ध करने अथवा बिलकुल श्राद्ध न करने का विधान है।[4]

अन्तिम दिन पितृगण वेदी पर उपस्थित होकर तृप्त होने की सूचना भी प्रदान करते हैं।[5]

समृद्धि चाहने वाला श्राद्धकर्त्ता तिष्य नक्षत्र में सफेद सरसों पिसवाकर उसे हाथों, पैरों, कानों तथा मुंह के ऊपर लेप करे तथा शेष उसका पीसा हुआ चूर्ण खा ले। यदि तेज वायु चल रहा हो तो दक्षिणाभिमुखी किसी आसन पर या बकरे के चर्म के आसन पर बैठ कर उस चूर्ण का भक्षण करना चाहिए।[6]

श्राद्ध में भोजन करने का विधान

आपस्तम्बधर्मसूत्र[7] में एक और आतिथ्य सम्बन्धी बात श्राद्धीय ब्राह्मणों की आदर सेवा में कही है कि उत्तर भारत में श्राद्धीय ब्राह्मणों को आसन पर बैठाकर जल–पात्र से जल लेकर श्राद्धकर्त्ता हाथ धुलाएं।

---

1 आ0 ध0 सू0, 2.8.18.12

2 मानं च कारयेत्प्रतिच्छन्नम्, आ0 ध0 सू0 2.8.18.15

3 (क) तस्योत्तरार्धे ब्राह्मणान् भोज्येत। आ0 ध0 सू0 2.8.18.16

(ख) उभयान् .... उपदिशन्ति। आ0 ध0 सू0 2.8.18.17

4 कृताकृतमत ऊर्ध्वम्।। आ0 ध0 सू0 2.8.18.18

5 श्राद्धेन तृप्तिं निवेदयन्ते पितरः। आ0 ध0 सू0 2.8.1 8.19

6 (क) 'तिष्येण पुष्टिकामः' आ0 ध0 सू0 2.8.18.20

(ख) गोरसर्षपाणां चूर्णानि ... भुञ्जीत। आ0 ध0 सू0 2.8.19.1, पा0 सू0 2.3.45

7 उदीच्यवृत्तिस्त्वासनगतानां हस्तेषुदपात्रानयनम्।। आ0 ध0 सू0 2.7.17.17

कठोपनिषद्[1] में ब्राह्मण अतिथि की शान्ति के लिए अर्घ्य–पाद्य' दान–रूपा–जल आदि से शान्ति करनी चाहिए क्योंकि वह ब्राह्मण ही साक्षात् अग्नि के रूप में प्रवेश करता है। जो दाता (यजमान) ऐसा नहीं करता उसका प्रत्यवाय सुना जाता है। यदि ब्राह्मण – अतिथि बिना भोजन किए रहता है तो उस मन्दबुद्धि पुरुष की सभी प्रकार की इच्छाएं उनके संयोग से उत्पन्न होने वाले फल यागादि इष्ट एवं उद्यानादि पूर्त कर्मों के फल तथा समस्त पुत्र और पशु आदि को ब्राह्मण का घर में भूखा रहना नष्ट कर देता है।[2]

जितना ग्रास एक बार में खा सके उतने अन्न का पिण्ड बनाना चाहिए, उसमें से थोड़ा भी अन्न भूमि पर नहीं गिरने देना चाहिए तथा भोजन पात्र को बाँये हाथ से न रक्खें। उस सम्पूर्ण ग्रास को अंगूठे के साथ मुख में डालते हुए एक ही बार में निगलने का विधान किया गया है।[3]

इस भोजन कार्य में मुख से किसी प्रकार का शब्द नहीं निकलना चाहिए तथा भोजन करते समय दाहिने हाथ को हिलाना भी निषिद्ध होता है।[4] इस समय में भोजन खाने के लिए जिस चमस का प्रयोग किया जाता है वह ताम्बे का होना चाहिए, तथा उसका मध्य भाग सोने से अलंकृत होना चाहिए। ऐसे चमस से भोजन खिलाना उत्तम कहा गया है।[5] जब भोजन समाप्त कर ले तो आचमन करके अपने दोनों हाथों को तब तक ऊपर उठाये

---

1 वैश्वानरः प्रविशत्यतिथिर्ब्राह्मणो गृहान्।
तस्यैतॉशान्तिं कुर्वन्ति हर वैवस्वतोदकम्।। कठ0 उ0 1.1.7

2 आशाप्रतीक्षे संगतँसूनृतांच
इष्टापूर्ते पुत्रपशून्श्च सर्वान्
एतद्वृङ्क्ते पुरुषस्याल्पमेधसो
यस्यानश्नन्वसति ब्राह्मणो गृहे।। कठ0 उ0 1.1.8

3 'यवाद् ग्रासं . . . ग्रासं ग्रसति सहाङ्गुष्ठम्' आ0 ध0 सू0 2.8.19.5

4 'न च मुख शब्दं कुर्यात्'। आ0 ध0 सू0 2.8.19.6,
'पाणि च नाऽवधूनुयात्' आ0 ध0 सू0 2.8.19.7

5 औदुम्बरश्चमसः सुवर्णनाभः प्रशास्तः' आ0 ध0 सू0 2.8.19.3

रखें जब तक उन में लगा जल सूख नहीं जाता। उसके पश्चात् अग्नि का स्पर्श करने का विधान किया जाता है।[1] जो यह पितृ पात्र होते हैं उनमें दूसरे को भोजन नहीं खाना चाहिए।[2] यह श्राद्ध प्रतिदिन एक वर्ष तक इस उपर्युक्त विधान के अनुसार करना चाहिए।[3]

मासिक श्राद्ध

मासिक श्राद्ध को करते समय श्राद्धकर्त्ता को दिन में मूल और फल के अतिरिक्त कुछ भी नहीं खाना चाहिए।[4]

श्राद्धकर्त्ता के लिए इस श्राद्ध में यह नियम है कि स्थालीपाक का तथा पितृगण या देवों के लिए संकल्पित अन्न का भोजन करने का विधान नहीं है।[5] भोजन करते समय उत्तरीय वस्त्र बांये कन्धे के ऊपर तथा दाहिनी भुजा के नीचे लपेटकर इस श्राद्ध का भोजन खाना चाहिए।[6]

मासिक श्राद्ध में चिकनाई से युक्त भोजन नियमपूर्वक ब्राह्मणों को देना चाहिए। घी तथा मांस से युक्त भोजन पितरों के लिए सबसे उत्तम पदार्थ समझा जाता है। यदि ये वस्तुएं उपलब्ध न हों तो तैल और शाक से युक्त भोजन देने का विधान किया गया है।[7]

यदि श्राद्ध वाले दिन मघा नक्षत्र का संयोग हो तो अधिक ब्राह्मणों को श्राद्ध के नियम के अनुसार घृत मिश्रित अन्न का भोजन कराना चाहिए।[8] प्रत्येक मासिक श्राद्ध पर

---

1 आचम्यचोर्ध्वौ . . . . आप्रोदकीभावात्। आ0 ध0 सू0 2.8.19.8

2 न चाऽन्येनापि भोक्तव्यम्। आ0 ध0 सू0 2.8.19.4

3 एवं संवत्सरम्, आ0 ध0 सू0 2.8.19.13

4 दिवा च न भुञ्जीताऽन्यन्मूलफलेभ्यः, आ0 ध0 सू0 2.8.19.10

5 स्थालीपाकानुद्दिष्टानि च वर्जयेत्। आ0 ध0 सू0 2.8.19.11

6 सोत्तराच्छादनश्चैवयज्ञोपवीती भुञ्जीता। आ0 ध0 सू0 2.8.19.12

7 सर्पिमांसमिति प्रथमः कल्पः अभावे तैलं शाकमिति। आ0 ध0 सू0 2.8.19.14,15

8 मघासु चाधिकं श्राद्धकल्पेन सर्पिर्ब्राह्मणान् भोजयेत्। आ0 ध0 सू0 2.8.19.16

एक द्रोण तिल से श्राद्ध सम्पादित करना चाहिए।[1] मासिक श्राद्ध का कर्म तिष्य नक्षत्र के आने तक प्रतिदिन करना चाहिए। प्रथम मास के तिष्य पर किये जाने वाले कर्म में एक ब्राह्मण, दूसरे तिष्य आने पर दो ब्राह्मण तथा तीसरे तिष्य नक्षत्र को तृतीय मास में तीन ब्राह्मण अर्थात् प्रत्येक मास में एक–एक ब्राह्मण की वृद्धि करते हुए यह श्राद्ध कर्म एक वर्ष तक करने का विधान किया गया है।[2]

धर्मपूर्वक उपार्जित धन योग्य व्यक्ति को दान करने पर अधिक तथा दीर्घकाल तक पितरों को सन्तुष्टि प्रदान करवाता है।[3] इस मासिक श्राद्ध में उपवास केवल प्रथम दिन में ही करने का विधान है।[4] अन्तिम श्राद्ध में लाल रंग के बकरे की बलि के साथ सम्पादित करना चाहिए।[5]

मासिक श्राद्ध के निषिद्ध कृत्य

श्राद्ध में तेज द्रव्य यथा तक्र (मठा), दधि (दही) आदि का उपयोग नहीं करना चाहिए।[6] इस श्राद्ध के अन्य नियमों जैसे भस्म व भूसे के ऊपर नहीं चलना चाहिए। एक पैर से दूसरे पैर को धोना नहीं चाहिए। एक पैर पर दूसरा पैर नहीं रखना चाहिए। दोनों पैरों को भोजन करते समय हिलाने का निषेध है। एक घुटने पर दूसरी जंघा को स्थापित नहीं करना चाहिए। नखों से नखों को भी नहीं रगड़ना चाहिए। बिना कारण अंगुलियों से आवाज़ नहीं करनी चाहिए। इस श्राद्धीय कर्म के अन्तर्गत वे कर्म नहीं करने चाहिए, जिनका

---

1 मासि श्राद्धे तिलानां . . . तेनोपयोजयते् । आ0 ध0 सू0 2.8.20.1

2 एवमहरहरापरस्मात्तिष्यात् । आ0 ध0 सू0 2.8.20.4–7

3 तथा धर्माहृतेन द्रव्येण तीर्थे प्रतिपन्नेन । आ0 ध0 सू0 2.7.16.24

4 आदितः एव उपवासः । आ0 ध0 सू0 2.8.20.9

5 आ0 ध0 सू0 2.8.18.14

6 आ0 ध0 सू0 2.8.20.10

निषेध किया गया हो। इसी सन्दर्भ में यह भी कहा गया है कि अयोग्य को कोई वस्तु न दें जिससे उसे भय पैदा न हो।[1]

मासिक श्राद्ध के विहित कार्य

मासिक श्राद्ध में कर्मानुगत धर्मानुकूल द्रव्योपार्जन करने में संलग्न रहना चाहिए। योग्य व्यक्तियों पर तथा उत्तम वस्तुओं पर धन व्यय करना चाहिए। धन दे कर व प्रिय वचन कह कर मनुष्यों से मित्रता रखें उन्हीं सुखों के साधनों का उपभोग करना चाहिए जिनका धर्म के द्वारा निषेध किया गया हो।[2]

इस प्रकार जो श्राद्ध के मासिक नियम का विधान पालन करता है तथा भोजन विषयक पूर्वोक्त नियमों का पालन करता है उसे अत्यन्त समृद्धि की प्राप्ति होती है।[3]

इस प्रकार का श्राद्धकर्त्ता दोनों लोकों को प्राप्त करता है।[4]

श्राद्ध का फल

श्राद्धकर्त्ता अपनी पवित्र भावना से श्रद्धापूर्वक अपने पितरों की तृप्ति हेतु श्राद्धकर्म करता है। श्राद्धकर्म करने वाले के विषय में आपस्तम्बधर्मसूत्र[5] में उल्लेख है कि श्राद्धकर्म करने से उसके कर्त्ता को विशेष फल की प्राप्ति होती है।

आपस्तम्बधर्मसूत्रकार ने उल्लेख किया है कि यदि श्राद्धकर्त्ता उत्तर पक्ष के प्रथम दिन को श्राद्ध प्रदान करता है तो इससे मिलने वाले फल में उसके घर में कन्याएं ही

---

1 आ० ध० सू० 2.8.20.11–17, 20

2 आ० ध० सू० 2.8.20.18,19,21,22

3 महान्तं पोषं पुष्यति। आ० ध० सू० 2.8.20.8

4 एवमुभौ लोकावभिजयति। आ० ध० सू० 2.8.20.23

5 कर्तुस्तु कालाभिनियमात्फलविशेषः। आ० ध० सू० 2.7.16.6 उत्तरार्द्ध

उत्पन्न होंगी।[1] दूसरे दिन श्राद्ध करने से उसे चोर वृत्ति के पुत्रों की प्राप्ति का फल मिलता है।[2] तीसरे दिन श्राद्ध करने से उत्पन्न होने वाले पुत्र वेदाध्ययन के व्रत का पालन करने वाले एवं ब्रह्म तेज से युक्त होंगे।[3]

चौथे[4] दिन श्राद्ध करने से श्राद्धकर्त्ता छोटे पशुओं भेड़–बकरियों से सम्पन्न होता है। याज्ञवल्क्यस्मृति[5] तथा पारस्कर[6] गृह्य सूत्र, कूर्म पुराण[7], मनुस्मृति[8], विष्णुधर्मसूत्र[9] में भी चतुर्थ दिन के फल के विषय में यही उल्लेख है।

जो पाँचवें दिन श्राद्ध करता है उसको पुत्रों की प्राप्ति होती है। वह अनेक पुत्रों का पिता होता है और पुत्रहीन होकर कदापि मृत्यु को प्राप्त नहीं होता।[10]

छठे[11] दिन श्राद्ध करने वाले को प्रायः देशाटन करने वाले तथा जुआ खेलने वाले जुआरी पुत्र की प्राप्ति होती है।[12]

---

1 प्रथमऽहनि क्रियमाणे स्त्रीप्रायमपत्ये जायते। आ0 ध0 सू0 2.7.16.7, कू. पु0 20.17

2 द्वितीये स्तेनाः। आ0 ध0 सू0 2.7.16.8

3 तृतीये ब्रह्म वर्चसिनः। आ0 ध0 सू0 2.7.16.9
तृतीयायां वेदिनश्च। याज्ञ0 स्मृ0 1.262

4 चतुर्थे क्षुद्रपशुमान्। आ0 ध0 सू0 2.7.16.10

5 पशून्वैः – याज्ञ0 स्मृ0 1.262

6 पा0 गृ0 सू0 परि0 क0 9

7 कूर्म पुराण 20.70

8 मनु स्मृ0 3.280

9 वि0 ध0 सू0 78.39

10 पञ्चमें पुमांसो बहवपत्यो न चाऽनपत्यः प्रमीयते।। आ0 ध0 सू0 2.7.16.11, मनु0 स्मृ0 3.280, याज्ञ0 स्मृ0 1.262, वि. ध0 सू0 78.40, कात्य0 गृ0 सू0 क0 9, पा0 गृ0 सू0 परि0 4.9

11 षष्ठेऽध्वशीलोऽक्षशीलश्च।। आ0 ध0 सू0 2.7.16.12, पार0 गृ0 सू0 परि0 4.9, कात्य0 गृ0 सू0 9, वि0 ध0 सू0 78.41, याज्ञ0 स्मृ0 1.262, कू0 पु0 20.18, म0 स्मृ0 3.281

12 सप्तमे कर्षे राद्धिः। आ0 ध0 सू0 2.7.16.13

सातवें[1] दिन श्राद्धकर्त्ता को कृषि के लाभ की सिद्धि मिलती है। पारस्करगृह्यसूत्र[2], मनु स्मृति[3], विष्णुधर्मसूत्र[4], याज्ञवल्क्यस्मृति[5], कात्यायन आदि सभी ने सप्तमी श्राद्ध का फल कृषि कर्म में सिद्धि प्राप्ति कहा है।

जो आठवें[6] दिन श्राद्ध करता है उसे समृद्धि की प्राप्ति होती है। विष्णुधर्मसूत्र,[7] मनु स्मृति,[8] कूर्म पुराण,[9] कात्यायन, [10] पारस्कर[11] गृह्य सूत्र आदि में भी वाणिज्य, व्यापार आदि में समृद्धि तथा उन्नति का फल बतलाया गया है।

नवें[12] दिन जो श्राद्ध करता है उसे एक खुर वाले पशुओं की प्राप्ति अर्थात् अश्व आदि की वृद्धि होती है। याज्ञवल्क्य स्मृति[13] में इस श्राद्ध का फल दो खुर वाले पशुओं का लाभ भी कहा गया है। पारस्कर[14] गृह्यसूत्रकार ने एक खुर वाले पशु लाभ की वृद्धि कहते हुए आपस्तम्बधर्मसूत्र का ही समर्थन किया है।

---

1 पार0 गृ0 सू0 क0 4.9

2 मनु0 स्मृ0 3.280

3 वि0 ध0 सू0 78.427

4 या0 स्मृ0 1.262

5 का0 गृ0 सू0 क0 9

6 अष्टमे पुष्टिः। आ0 ध0 सू0 2.7.16.14

7 वि0 ध0 सू0 78.43

8 मनु स्मृति 3.277

9 कू0 मु0 20.18

10 कात्यायन गृ0 सू0 क0 9

11 पा0 गृ0 सू0 क0 9

12 नवम एक खुराः। आ0 ध0 सू0 2.7.16.15

13 याज्ञ0 स्मृ0 1.262

14 एक शफं नवम्यां। पा0 गृ0 सू0 क0 9

दसवें[1] दिन श्राद्ध करने से व्यवहार अर्थात् व्यापार में उन्नति होती है। कात्यायन,[2] पाररकर[3] गृह्यसूत्रकार, याज्ञवल्क्य [4] व विष्णुधर्मसूत्रकार[5] तथा कूर्म[6] पुराणकार ने दो खुरों वाले पशुओं की प्राप्ति एक खुर वाले पशु की प्राप्ति तथा व्यापार में लाभ कहा है।

ग्यारहवें[7] दिन श्राद्ध करने के फल से लोहे और त्रपुस (लोहा विशेष)की सम्पत्ति की वृद्धि होती है। पाररकर[8] गृह्य सूत्र, याज्ञवल्क्य स्मृति, कूर्म पुराण,[9] कात्यायन गृह्य सूत्र[10] में भी एकादशी के श्राद्ध करने से परिचारक, सोना व चाँदी की प्राप्ति, रुप्य व ब्राह्मवर्चस्वी पुत्रों का लाभ तथा लोहे व रांगा की सम्पत्ति में वृद्धि कही गयी है।

बारहवें दिन जो श्राद्ध सम्पादित करता है वह अनेक पशुओं का स्वामी बनता है।[11] कूर्म पुराण[12] में इस दिन के श्राद्ध का फल जातरूप रजत और कुप्य का लाभ कहा गया है।[13] विष्णुधर्मसूत्र[14] में इस दिन के श्राद्ध करने से सोना तथा चाँदी की प्राप्ति बतलायी

---

1 दशमे व्यवहारे राद्धिः। आ0 ध0 सू0 2.7.16.16

2 कात्य0 गृ0 सू0 क0 9

3 दशम्यां गावः। पा0 गृ0 सू0 क0 9

4 एकशफांस्तथा। याज्ञ0 स्मृ0 1.262

5 वि0 ध0 सू0 78.45

6 कू0 पु0 20.19

7 एकादशे कृष्णायसं त्रपुसीसाम्। आ0 ध0 सू0 2.7.16.17

8 ब्रह्मवर्चस्विन पुत्रान् ..... । याज्ञ0 स्मृ0 1.262

9 पा0 गृ0 सू0 परि0 क0 4.9

10 एकादश्यां जातरूपश्चरजतं कुप्यमेव च। कू0 पु0 20.19

11 का0 गृ0 सू0 परि0 क0 9

12 द्वादशे पशु मानम्। आ0 ध0 सू0 2.7.16.18

13 द्वादश्यां जातरूप च रजतं कुप्यमेव च। कू0 पु0 20.19

14 कनकं रजतं द्वादश्यां। वि0 ध0 सू0 78.47

गयी है। पारस्कर व कात्यायन गृह्य सूत्रों में धन तथा अनाज की प्राप्ति इस श्राद्ध का फल कहा गया है।[1]

तेरहवें[2] दिन श्राद्ध करने से अनेक पुत्रों तथा अनेक मित्रों का लाभ होता है। ये पुत्र बड़े सुन्दर होते हैं। परन्तु अल्प आयु को ही भोगते हैं। विष्णुधर्मसूत्र[3] में सौभाग्य की प्राप्ति कही गयी है। पारस्कर गृह्यसूत्र में कहा है कि इस श्राद्ध से सोना–चाँदी की प्राप्ति तथा सम्बन्धियों में श्रेष्ठता प्राप्त होती है।[4]

चौदहवें[5] दिन श्राद्ध सम्पन्न करने पर श्राद्धकर्त्ता को युद्ध में सफलता मिलती है। परन्तु विष्णुधर्मसूत्र में, पारस्कर गृह्य सूत्र में, कात्यायन गृह्य सूत्र तथा मनु स्मृति आदि में चतुर्दशी का श्राद्ध करने से शस्त्राघात से युवा पुत्रों की मृत्यु, कुप्रजा की प्राप्ति, शस्त्र–आघात तथा युद्ध में भी सफलता मिलती है।[6] चतुर्दशी का श्राद्ध भी इतना श्रेष्ठ नहीं कहा है।

आपस्तम्बधर्मसूत्र[7] में कहा है कि पन्द्रहवें दिन श्राद्ध करने पर समृद्धि की प्राप्ति कही है। विष्णुधर्मसूत्र[8], कात्यायनगृह्यसूत्र,[9] पारस्करगृह्यसूत्र,[10] में सभी कामनाओं की पूर्ति

---

1 धन–धान्यानि द्वादश्यां। पा0 गृ0 सू0 परि0 क0 9

2 त्रयोदशे बहुमित्रो दर्शनीयापत्यो युवमारिणस्तु भवन्ति। आ0 ध0 सू0 2.7.16.19

3 सौभाग्यं त्रयोदश्यां। वि0 ध0 सू0 78.48

4 कुप्यर्ठहिरण्यं जाति श्रेष्ठयं च। पा0 गृ0 सू0 परि0 क0 9, का0 गृ0 सू0 क0 9, कू0 पु0 20.20

5 चर्तुदश आयुधे राद्धिः। आ0 ध0 सू0 2.7.16.20

6 युवानस्तत्रम्रियन्तेशस्त्रहतस्य चर्तुदश्यौं युवमारिणस्तु भवन्ति।। वि0 ध0 सू0 78.50, पार0 गृ0 सू0 पद्धिक0 9, का0 गृ0 सू0 क0 9, मनु स्मृ0 3.280(21)

7 पञ्चदशे पुष्टिः। आ0 ध0 सू0 2.7.16.21

8 सर्वकामान्पञ्चदश्या। वि0 ध0 सू0 78.49

9 का0 गृ0 सू0 क0 9

10 पा0 गृ0 सू0 क0 9

इस श्राद्ध का फल कहा है। याज्ञवल्क्य [1] स्मृतिकार के अनुसार जो कोई कृत्तिका से ले कर भरणी पर्यन्त नक्षत्रों में श्राद्ध करता है वह स्वर्ग, सन्तान, बल, शूरता, क्षेत्र, पुत्र, श्रेष्ठता, सौभाग्य, समृद्धि, मुख्यता, शुभ प्रवृत्ति, राज्य–व्यापारादि, आरोग्य, यश, शोक का नाश, परमगति, धन, वेद, वैद्यक की सिद्धि, शुभशरीरता, अजा, अश्व तथा अवस्था इन सब फलों को प्राप्त करता है।

विष्णुधर्मसूत्र[2] में वारों के अनुसार श्राद्ध फल का उल्लेख है कि रविवार को सर्वत्र विजय, बुधवार को सभी अभिलाषाओं की पूर्ति, बृहस्पतिवार को अभीष्ट विद्या की प्राप्ति शुक्रवार में धन–प्राप्ति, शनिवार को दीर्घायु की प्राप्ति होती है।

आपस्तम्बधर्मसूत्र मे भी पत्नी को मध्यम पिण्ड देने की बात कही गयी है।[3] बौधायन[4] के अनुसार श्राद्ध कर्म से दीर्घायु, स्वर्ग, प्रशंसा तथा समृद्धि की प्राप्ति होती है तथा श्राद्धकर्त्ता प्रजा उत्पन्न कर अपने पूर्वज–पितरों को प्रसन्न कर ऋणों से मुक्ति तथा स्वर्ग प्राप्त करता है।

---

1 स्वर्गाद्यपत्यभोजश्च शौर्य . . . आस्तिकः श्राद्धधानश्च व्यपेतमदमत्सरः। याज्ञ0 स्मृ0 1.265–268।

2 वि0 ध0 सू0 78.1.7

3 आ0 श्रौ0 सू0 2.10.13

4 पित्र्यमायुष्यं स्वर्ग्यं प्रशंस्यं पुष्टिकर्म च।
प्रजापितॄन्पूर्वाननृणो दिवि मोदत्ते।। बौ0 ध0 सू0 8.14.1.5